आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र में ग्रामीण महिलाओं की सक्रिय सहभागिता

पुष्पा तातेड़

प्रस्तावना :

ग्रामीण भारतीय जन–जीवन में सामाजिक पहलू, आर्थिक विचार व प्रकृति को व्यापक रूप से प्रभावित करते हैं, विशेषतः ग्रामीण क्षैत्र की महिलाओं के सन्दर्भ में भारतीय समाज एक कृषि प्रधान समाज है जिसमें कृषक हस्तशिल्प में संलग्न कारीगर तथा द्वितीयक या निम्न सेवाओं में संलग्न व्यक्ति इस अर्थव्यवस्था के तीन प्रमुख अंग है। इन तीनों वर्गों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। कृषि हस्तशिल्प से सम्बन्धित वस्तुओं के उत्पादन एवं विक्रय में महिलाओं ने परम्परागत रूप से सक्रिय योगदान दिया है। अधिकतर बाजार स्थानीय प्रवृति के थे या उन तक सरलता से पहुँचा जा सकता है। प्राचीन भारत में महिलाओं को आर्थिक जीवन में भाग लेने का जितना अवसर प्राप्त था वह मध्ययुगीन भारत में निरन्तर कम होता चला गया। पर्दा प्रथा के प्रचलन तथा स्त्रियों के क्रियाकलाप के सम्बन्ध में विकसित नवीन मान्यताओं एवं निशेधों के कारण स्त्रियाँ जीवन में अपेक्षाकृत कम भाग लेने लगी।

ब्रिटिश कालीन समाज में महिलाओं की आर्थिक स्थिति की निम्नता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति के तहत् कुटीर उद्योग और हस्तशिल्प का लोप था। इन कार्यों में महिलायें पर्याप्त मात्रा में लगी हुई थी इससे ये महिलाएं या तो बेरोजगारी या अर्द्ध बेरोजगारी की स्थिति में आ गयीं। परिवर्तनशील औद्योगिक व्यवस्था में नवीन आर्थिक मुल्यों का उदय हुआ जिसमें आर्थिक लाभ, सफलता और अर्जनात्मक उपलब्धि पर बल दिया जाने लगा किन्तु महिलाओं के सम्मुख नवीन आर्थिक व्यावसायिक संरचना में प्रवेश करना या उससे समायोजना स्थापित करना कठिन था।

भासकीय एवं अशासकीय संगठनों के सक्रिय नियोजन एवं क्रियान्वयन के कारण महिलाओं की स्थिति में सुधार होने लगा है, लेकिन खेद की भी बात है कि भारतीय समाज में महिलाओं को आर्थिक एंव राजनीति क्रियाकलापों से पृथक रखा गया है तथा पत्नी एवं माता के रूप में उन्हें पुरूष की तुलना में कम भाक्ति और विशेषाधिकार प्राप्त है पुरूषों एवं महिलाओं की असमानता मूलतः संरचनात्मक असमानता है तथा इसकी वैधता सांस्कृतिक आधार पर प्रस्तुत की जाती है। आर्थिक जीवन में महिलाओं की सहभागिता एवं पुरूष के समान आर्थिक अवसरों एवं अधिकारों से संबंधित विवाद मुख्यतः निम्नलिखित तीन बिन्दुओं पर केन्द्रित रहा है:

1. महिलाओं की आर्थिक पराधीनता और आश्रित स्थिति समाज में पुरूष और स्त्रियों के मध्य कार्यो का विभाजन है और इस कारण महिलाओं का शाोषण होता है सामान्तः यह माना जाता है कि स्त्रियों का कार्य क्षेत्र पारिवारिक कार्यो तक ही केन्द्रित है तथा उन्हें सामाजिक एवं आर्थिक उत्पादन कार्यों से विरत रहना चाहिए। मार्क्स के अनुसार नारी मुक्ति और पुरूषों के बराबर उनकी समानता तब तक संभव नही है जब तक महिलाओं को केवल गृहस्थी के कार्य जो कि निजी कार्य है तक केन्द्रित रखा जाये तथा उन्हें सामाजिक रूप से उत्पादक कार्यो में संलग्न न किया जाये। महात्मा गांधी ने स्त्रियों की निम्न दशा के सम्बन्ध में यह लिखा है कि स्त्रियों को केवल संतान उत्पन्न करने, पति की देखभाल करने और गृहस्थ कार्य को सम्पादित करने का माध्यम माना जाता है। उसे घर की दासी बना दिया गया है और जब वो काम करने लिए जाती है तो उसे पुरूष की तुलना में कम मजदूरी दी जाती है। इस प्रकार से सामाजिक न्याय और मानव अधिकार के अन्तर्गत महिलाओं को आर्थिक समस्या से मुक्त किया जाये एवं उन्हें आर्थिक रूप से सहभागी एवं स्वावलम्बी बनाया जाये।
2. यह तथ्य समाज के हित में है कि मानवीय संसाधन का पूर्ण एंव प्रभावशाली उपयोग किया जाये। विकास का पूर्ण लाभ तभी मिल सकता है जब महिलाओं को आर्थिक क्रियायाकलाप से पृथक न रखा जायें एवं उन्हें विकास की व्यापक

प्रक्रिया में सम्मिलित किया जायें। महिलाओं के प्रति भेदभाव मानवीय गरिमा तथा परिवार एवं समाज के कल्याण के विरूद्ध है। यह भेद भाव महिलाओं को पुरूष के समान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने से रोकता है। साथ ही साथ इस अवरोध के कारण महिलाओं के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास भी संभव नही हो पाता। किसी भी आर्थिक व्यवस्था का प्रमुख कार्य होता है, विभिन्न प्रकार के आर्थिक क्रियाकलापों के मध्य समुचित परिमाणात्मक संतुलन बनाये रखना। यह तभी संभव है जब पुरूषों और स्त्रियों को समाज में स्वतंत्रता प्राप्त हो। स्त्रियों की समान सहभागिता केवल स्त्रियों के विकास की ही नही वरन् सम्पूर्ण देश के विकास की एक आवश्यक पूर्व भार्त है, कि मानवीय संसाधनों का विकास राष्ट्र के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। यह कार्य तभी संभव है जब स्त्रियों को आर्थिक जीवन में भाग लेने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो।

3. सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप इस बात की आवश्यकता उत्पन्न होती है कि समाज के सभी सदस्यों को ज्ञान और क्रियात्मकता का लाभ प्राप्त हो। आधुनिक समाज में जंनसख्या और सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में जो नवीन प्रवृतियां दृष्टिगोचर हो रही है, उसके अनुरूप परिवार और समाज में स्त्रियों की भूमिका को पुर्नपरिभाषित करने की आवश्यकता है। विवाह की आयु परिवार के आकार, नगरीकरण, जनसंख्या स्थानान्तरण, मूल्यवृद्धि, जीवन स्तर की उच्चता और निर्णय प्रक्रिया में अपेक्षाकृत अधिक सहभागिता इत्यादि परिवर्तन के ऐसे क्षेत्र हैं जो महिलाओं की भूमिका और उत्तरदायित्व में परिवर्तन की अपेक्षा करते है। सामाजिक संकटों में निवारण और सामाजिक व्यवस्था में संतुलन बनाये रखने के लिए महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन आवश्यक है। ऐसा न होने पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया सुचारू रूप से संचालित न हो सकेगी। उपर्युक्त तीनों तर्को के आधार पर इस बात की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है कि महिलाओं को आर्थिक जीवन में अपेक्षाकृत अधिक सहभागी बनाया जाये तथा उनकी स्थिति पुरूषों के समकक्ष हो जाये। समकालीन भारतीय समाज में महिलाओं की सहभागिता का विश्लेषण करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि परम्परागत रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं का क्या स्थान रहा है। किसी भी जनसंख्या की सामाजिक परिस्थिति का सम्बन्ध उसके आर्थिक स्थान से अत्यन्त घनिष्ठ है। महिलाओं की आर्थिक परिस्थिति को समाज के विकास का एक महत्वपूर्ण सूचकांक माना जाता है किन्तु इसका तात्पर्य यह नही है कि सभी प्रकार की विकास प्रक्रियाएं महिलाओं के आर्थिक स्तर को उन्नत करती है। महिलाओं का क्रियाकलाप उन सामाजिक अभिवृत्तियों और संस्थाओं के द्वारा प्रभावित होता है जो किसी काल विशेष एवं स्थान विशेष में किसी सामाजिक वैचारिकी की उपज होती है। विभिन्न प्रकार के आर्थिक विकास के स्तर में यह सामाजिक वैचारिकी भिन्न भिन्न होती है। उदाहरणार्थ विकास के एक विशिष्ट स्तर में काम करने की क्षमताए उच्च सामाजिक परिस्थिति का सूचक हो सकती है। विकास की दूसरी अवस्था में जब समाज असमान वर्गों में विभाजित हो जाता हैं। तब आराम काम के स्थान पर सामाजिक परिस्थिकी का सूचकांक बन जाता है। लैंगिक असमानता यद्यपि सामाजिक संरचना के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त है, किन्तु इसका जो स्वरूप आर्थिक जीवन में देखने को मिलता है वह अन्य क्षेत्रों में नहीं। मध्ययुगीन भारत में ब्रिटिश भाासन की स्थापना के पश्चात समाज सामन्तवादी युग से औद्योगिक युग में प्रवेश करता है। उत्पादन बड़ें पैमाने पर किया जाने लगा। फैक्टरी उत्पादन के कार्यो में निरन्तर कम सहभागी होने लगी। जब तक वस्तुओं का उत्पादन हाथ से होता था, महिलाओं की सहभागिता इसमें अपेक्षाकृत अधिक थी, किन्तु जब उत्पादन मशीन के द्वारा फैक्ट्री में होने लगा तो महिलाओं के द्वारा अपने परम्परागत कार्यो को छोडकर फैक्ट्री में जाकर काम करना कठिन होने लगा। साथ ही साथ औद्योगिक समाज की उत्पादन प्रक्रिया विकसित और विशेषीकृत होती है तथा इसके लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता है। महिलाओं के लिए इसका प्रशिक्षण सामाजिक मर्यादाओं और प्रतिबन्धों को तोडकर प्राप्त कर पाना कठिन था।

भूमि संबंधी जो नवीन व्यवस्था लागू की गयी वह जमीदारी या रैयतबाडी व्यवस्था के नाम से जानी जाती है। इस व्यवस्था में जमींदार न केवल कर वसूलने का कार्य करता था, वरन् वह भूमि का वैधानिक रूप से स्वामी भी बन गया। साधारणतया जातिगत उच्चता और निम्नता के अनुरूप भूमि स्वामित्व के अधिकारों का वितरण हुआ।

उच्च जाति के सदस्य जमींदार बने तथा उन्हें ब्रिटिश भाासन के द्वारा पर्याप्त भाक्ति सुविधा और विशेषाधिकार प्राप्त हो

गया। निम्न और मध्यम जाति के सदस्य भूमिहीन कृशक मजदूर के रूप में जीवन यापन करने के लिए बाध्य हुये। परम्परागत जजमानी व्यवस्था ने ब्रिटिशकालीन जमींदार व्यवस्था की वैधानिक सत्ता को सामाजिक आधार और भाक्ति प्रदान करके कृषक मजदूर के भाोषण का मार्ग प्रयशस्त किया। निम्न और मध्यम जाति की महिलाएं बेरोजगारी या सस्ते श्रम के द्वारा जमींदारी व्यवस्था को दृढता प्रदान करने लगीं। इन महिलाओं का कृषि उत्पादन की प्रक्रिया में यद्यपि महत्वपूर्ण स्थान था तथापि उन्हें इसका जो स्थान प्राप्त होना चाहिए था। वह नहीं मिला।

स्वात़ंत्र्योत्तर भारत में महिलाओं की आर्थिक सहभागिता के नवीन आयामों का विस्तार हुआ है। एक ओर संविधान ने समानता का अधिकार प्रदान करके लैंगिक आधार पर की जाने वाली असमानता को सैद्धान्तिक रूप से समाप्त कर दिया है तो दूसरी ओर विकास कार्यक्रम अपनाये गये है। इनके कार्यक्रमों के अतिरिक्त रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है। अतः स्वंतत्रता के पश्चात महिलाओं को आथिक भाक्ति एंव स्वातंत्र्य के लिए नवीन परिवेश उपलब्ध हुआ। विविध अध्ययनों से ज्ञात होता है कि उन महिलाओं की आर्थिक सहभागिता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है जिसके परिवार का आर्थिक स्तर अपेक्षाकृत निम्न पाया जाता है। यह सर्वविदित होता है कि प्रत्येक देश के आर्थिक क्रियाओं में दो आधारों पर अंतर किया जाता है, संगठित और असंगठित क्षेत्र।

संगठित क्षेत्र में उद्योग का व्यापार जितने अधिक व्यापक पैमाने पर किया जाता है उतने व्यापक पैमाने पर असंगठित क्षेत्र में नही। असंगठित क्षेत्र में सगठित क्षेत्र की भाति मजदूर संघो तथा मजदूरों के हितों की रक्षा करने वाले कानूनों का अभाव होता है। चूँकि असंगठित क्षेत्र में मजदूर संघ या तो नहीं होते या निष्क्रिय होते हैं, अतः इस क्षेत्र के श्रमिकों को सौदेबाजी का वह अनुकूल अवसर प्राप्त नहीं होता, जो संगठित क्षेत्र के मजदूरों को प्राप्त है। असंगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की बडी संख्या कार्यरत है। परम्परागत रूप से भारतीय समाज में महिला कार्मिकों का एक महत्वपूर्ण भाग कृषिक्षेत्र में संलग्न रहा है और कृषि कार्यों और स्वरोजगार के क्षेत्र में इनकी संख्या निरन्तर बढती जा रही है। असंगठित क्षेत्र में महिलाओं का स्वरोजगार मुख्यतः छोटे मोटे धंधे खाद्य सामग्री की तैयारी या अन्य छोटे रोजगार जैसे बीड़ी बनाना, कपडों की सिलाई, लेस बनाना, अगरबती, दियासलाई बनाना ईत्यादि में मुख्य रूप से केन्द्रित है। परिवार में केन्द्रित जिन उद्योगों में महिलाओं की संख्या पुरूषों से अधिक पाई जाती है, वे गन्ना उद्योग, सूत कातना, जूट की वस्तुएँ बनाना, काफी बनाना, रस्सी बनाना, रेशम के कीडे पालना, मक्खन, घी, जैम, जेली बनाना और तम्बाकू बनाना है।

असंगठित क्षेत्र महिलाओं के लिए असुरक्षित क्षेत्र है, इसमें उन्हें अधिक परिश्रम किन्तु श्रम पुरस्कार एवं कम उत्पादन परन्तु लम्बी अवधि तक कार्य करना पडता है। किन्तु भारतीय असंगठित क्षेत्र के है। अध्ययन के आधार पर ज्ञात हुआ कि विकास कार्यक्रम भी ऐसी आर्थिक क्रियाओं को प्रोत्साहित करते हैं जो कि असंगठित क्षेत्र के रोजगार के अवसरों को विस्तृत कर रहे है। उद्यमी का व्यक्तिगत लाभ भी इसी में है किन्तु वह उत्पादन का कार्य असंगठित क्षेत्र में करें क्योंकि इस क्षेत्र में कारखाना अधिनियम, श्रमिक अधिनियम इत्यादि कानूनों का हस्तक्षेप कम होता है तथा दूसरी ओर कम मजदूरी ओर कम मजदूरी पर अधिक कार्य लेना संभव होता है। अध्ययन द्वारा यह विदित होता है कि महिला श्रम की आपूर्ति परिवार के आय के स्तर से नियोजित होती है न कि मजदूरी की दर से। चूँकि अधिकतर महिला कार्मिक परिवार की निम्न आय के स्थिति के कारण प्रवेश करती है इसलिए वे किसी भी प्रकार का कार्य और मजदूरी की कोई भी दर स्वीकार कर लेती है। असंगठित क्षेत्र की महिलाओं की आर्थिक व्यवस्था का विश्लेषण करके सामाजिक न्याय और नीति निर्धारण के दृष्टिकोण से दो निष्कर्षों का प्रतिपादन किया है। जनसंख्या का उत्तरोत्तर बढता हुआ अंश सीमान्त रेखा पर निवास कर रहा है। असंगठित क्षेत्र में कम मजदूरी का श्रम उपलब्ध है इसलिए उद्यमी अपने अधिक से अधिक आर्थिक क्रिया कलापों को ऐसे में करना होगा। इनका परिणाम यह होगा कि इन महिला कार्मिकों को आर्थिक विकास की प्रक्रिया का कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं होगा। यह स्थिति न केवल महिलाओं की स्थिति के लिए घातक है वरन् आर्थिक विकास की प्रक्रिया भी असंतुलित हो जायेगी।

परिणाम स्वरूप भारत के सामाजिक, आर्थिक विकास की वृहद् प्रक्रिया के संदर्भ में ग्रामीण महिला की स्थिति की विवेचना करते हुए ज्ञात होता है कि एक ओर तो सामाजिक सांस्कृतिक मान्यताओं, मर्यादाओं तथा पुरूष प्रधान समाज एंव पितृ सत्तात्मक पारिवारिक संगठन के परिणाम स्वरूप महिलाओं की प्रतिबंधित आर्थिक सहभागिता को विस्तृत करने

में सामाजिक, आर्थिक विकास ग्रामीण पुनर्निर्माण कार्यक्रम और महिला आरक्षण कार्यक्रम ने पर्याप्त मात्रा में योगदान दिया है। किन्तु दूसरी ओर महिला की आर्थिक भाक्ति एवं उनकी प्रभावशीलता का विस्तार चाहते है तो इसके लिए यह आव यक है कि पुरूष प्रधान समाज का नारी के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हो। परिवार में महिलाओं के समाजीकरण एवं उसकी भूमिका के नवीन प्रतिमानों का विकास हो। यदि हम ऐसा करेगें तो सही मायनें मे ग्रामीण महिलाएं आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती है, जिससे भारतीय ग्रामीण समाज भी भाहरीय समाज की भांति आर्थिक रूप से मजबूत एंव सशक्त एंव सशक्त होगा।

वर्तमान में भवन एवं अन्य संनिर्माण श्रमिक कल्याण मण्डल, राजस्थान हिताधिकारियों के लिए असंगठित क्षेत्र के भवन व अन्य निमाण श्रमिकों के नियोजन और सेवा शर्तो को विनियमित करने और उनकी सुरक्षा, स्वास्थ्य व कल्याण के उपाय के उद्देश्य से भवन एवं अन्य संनिर्माण श्रमिक अधिनियम 1996 बनाया गया हैं। अधिनियम के अन्तर्गत निर्माण श्रमिकों का हिताधिकारी के रूप में पंजीयन करने और योजनाएं संचालित करने के लिए राज्यों में कल्याण मण्डल गठित करने के प्रावधान किये गये। इसी की पालना में राजस्थान में वर्ष 2009 में राज्य नियम अधिसूचित किये जाने के बाद ''भवन एवं अन्य संनिर्माण श्रमिक कल्याण मण्डल'' गठित किया गया, जिसके द्वारा निर्माण श्रमिकों का हिताधिकारी के रूप में पंजीयन किया जाता हैं तथा उनके कल्याण की विभिन्न योजनाएं संचालित की जाती हैं। 01 जनवरी 2016 से लागू की गई भामाशाह निर्माण श्रमिक कल्याण योजना के अन्तर्गत शिक्षा, आवास, स्वास्थ्य बीमा तथा जीवन व भविष्य सुरक्षा की बहुआयामी योजना लागू की गई।

***शोधार्थी**
समाजशास्त्र, म.द.स.वि., अजमेर